

॥ श्रीकृष्णाय नमः ॥
॥ श्रीमदाचार्यचरणकमलेभ्यो नमः ॥

श्रीभागवतस्कन्धप्रकरणाध्यायविभाग सूचिका

भगवत्प्रेमसे अन्य न कोई साधन उत्तम ॥
सदा भागवत पढ़ो-सुनो साधन सर्वोत्तम ॥१॥
द्रव्यलाभके हेतु उन्हें जानो अधमाधम ॥
दम्भप्रयोजनरहित होंय तो जानो सत्तम ॥२॥
वल्लभका उपदेश भला क्यों भूल गये हम ! ॥
पुष्टिमार्ग-अनुगामी होनेका भरते क्यों दम ? ॥३॥
प्रभुचरण श्रीगोपीनाथ वल्लभसुत सक्षम ! ॥
पंचशती निष्ठाप्रद उत्सव बने महत्तम ॥४॥

(उपक्रम)

भागवतार्थनिबन्धमें उपदिष्ट रीतिके अनुसार श्रीभागवतीय स्कन्ध प्रकरण एवं अध्याय के विभागोंका निरूपण समझनेसे पहले कुछ बातें जान लेनी आवश्यक हैं.

श्रीभागवत महापुराणके अनुसार

मनुष्यके लिये सबसे श्रेष्ठ धर्म तो वही होता है कि जिसके कारण अधोक्षज भगवान्‌के बारेमें फलोंकी कामनासे रहित अहैतुकी एवं रोग आदि प्रतिबन्धोंसे रहित अप्रतिहता भक्ति सिद्ध हो पाये. इसके कारण, स्वयं परमात्माकी तरह ही, भगवद्धर्मोंके आवेशवश जीवात्माका अन्तःकरण भी सुप्रसन्न हो पाता है. क्योंकि भगवान्‌ वासुदेवके साथ भक्तियोगके द्वारा जुड़नेपर सहज ही जागतिक विषयोंमें वैराग्य और जगदीशके गुण-धर्म-लीला-में अनुराग प्रकट हो जाता है. अन्यथा भलीभांति धर्मानुष्ठान करनेपर भी भगवत्कथामें यदि रति उत्पन्न न होती हो तो ऐसे धर्मानुष्ठानको निरर्थक श्रम ही केवल समझना चाहिये. क्योंकि मोक्षप्रदायक धर्मपुरुषार्थका प्रयोजन कभी आर्थिक लाभ हो नहीं सकता. धर्मप्रसाधक अर्थपुरुषार्थका प्रयोजन कभी क्षुद्रकामनाओंकी तुष्टिको माना नहीं जा सकता. इसी तरह कामपुरुषार्थका प्रयोजन केवल अपनी इन्द्रियोंको सुखप्रदान करनेमात्रमें परिसीमित कभी माना नहीं जा सकता. क्योंकि स्वयं जीवनका भी प्रयोजन केवल जीवके स्वरूपज्ञानमें परिसीमित किया नहीं जा सकता है. तत्त्ववेत्ताओंके अनुसार परम तत्त्व तो वह अद्वय ज्ञान होता है जिसे 'ब्रह्म' 'परमात्मा' और 'भगवान्‌' कहा जाता है. मुनिगण ऐसे उस तत्त्वमें श्रद्धा रखते होनेके कारण श्रुतिगृहीत भक्तिद्वारा उस तत्त्वको अपनी आत्माके भीतर विद्यमान आत्माके रूपमें ही निहारते हैं. अतः वर्णाश्रमके विभाजनके अनुसार साधारण पुरुषोंकी तुलनामें जैसे द्विजोंको श्रेष्ठ माना गया है, वैसे ही धर्मोंका भी भलीभांति अनुष्ठान करना, अन्ततः तो आत्मा और परमात्मा दोनोंको सन्तुष्ट करनेवाला हो तभी श्रेष्ठ माना जाना चाहिये. अतः यहां-वहां भटकनेके कारण अपना मन व्यग्र न हो पाये, इस तरह सात्त्वत भक्तोंके नाथ भगवान्‌के बारेमें कर्ण-वाणी रूप बाह्येन्द्रियों द्वारा श्रवण (अर्थात्

भगवान्‌के वाचक पदों और वाक्यों द्वारा भगवान्‌का जैसा स्वरूप निर्धारित हो उसे सुनना) और कीर्तन (भगवान्‌के वैसे स्वरूपके निर्धारक वचनोंका पुनः-पुनः आवर्तन) करना चाहिये. इसी तरह आन्तर-इन्द्रियोंद्वारा ध्यान (चित्तको वहां सुस्थिर बनाना अथवा भगवत्स्वरूप या भगवन्मूर्ति का निरन्तर अनुसन्धान) करना चाहिये. अन्ततः बाह्याभ्यन्तर दोनों तरह भगवान्‌का पूजन सदा करते रहना चाहिये. यही प्रमुख धर्म है.
(द्रष्ट. : भाग.पुरा.१।२।५-१४).

भागवतपुराणके इन वचनोंके आधारपर इतना तो स्पष्ट हो जाता है कि श्रवण-कीर्तन आदिके विषय भगवान्‌ होने आवश्यक हैं. क्योंकि साक्षात् तो भगवान्‌को सुना नहीं जा सकता फिरभी भगवद्वाचक शब्दोंको तो सुना ही जा सकता है. क्योंकि भगवान्‌ और भगवल्लीला का आपसी सम्बन्ध सूर्य और उसके रश्मि-प्रकाश की तरह अन्योन्यात्मक ही होता है. अतः वैसे शब्दोंका श्रवण भी भगवान्‌का ही श्रवण सिद्ध होता है. भगवान्‌की लीला सर्ग विसर्ग स्थान पोषण ऊति मन्वन्तर ईशानुकथा निरोध मुक्ति और आश्रय यो दशधा वर्णित हुयी हैं. अतः दशविधलीलाओंके साथ लीलाकर्ताके रूपमें भगवान्‌के श्रवण आदि करने चाहिये. इन लीलाओंके श्रवण आदिमें अधिकारी होना भी अपेक्षित है. अतः पहले अधिकार और साधन के निरूपणके बाद तृतीय स्कन्धसे आरम्भ कर बारहवें स्कन्ध तक दशविध लीलाओंका निरूपण किया गया है.

(प्रथम-द्वितीय स्कन्धार्थ अधिकार-साधन)

इन लीलाओंके श्रवण आदिके अंगतया अधिकार तथा साधनों का निरूपण क्रमशः प्रथम तथा द्वितीय स्कन्धोंमें किया गया है.

(प्रथमस्कन्धके तीन प्रकरणोंका अर्थ)

श्रीभागवतके श्रवणका अधिकार ^कहीन ^खमध्यम तथा ^गउत्तम यों तीन प्रकारोंमें सम्भव है. अतः प्रथम स्कन्धमें यथायथ तीन प्रकरण हैं.

(१-३ यों तीन अध्यायोंवाला ^कप्राथमिक या हीन अधिकारका द्योतक प्रथम प्रकरण)

श्रीभागवतके श्रवणार्थ प्राथमिक या हीन अधिकारके रूपमें अर्थात् न्यूनतम योग्यताके वास्ते श्रोतामें

१. जिज्ञासुता

२. अमात्सर्य

और

३. श्रवणादर

होने आवश्यक माने गये हैं. श्रीभागवतके कीर्तनार्थ वक्ताके योग्य अधिकारी होनेके गुण

१. स्वयं भागवतके तत्त्वको सम्प्रदायके अनुसार भलीभांति सुन कर समझनेवाला

२. चतुर

३. गूढ़ अर्थोंको जाननेवाला

यों तीन गुण आवश्यक माने गये हैं. अतः इन तीन गुणोंके अनुसार तीन अध्याय इस प्रकरणमें योजित हुवे हैं.

(१) इस हीनाधिकारके प्रकरणके प्रथमाध्यायमें प्रश्नकर्ताके रूपमें श्रोताके जिज्ञासु होनेका गुण. इसी तरह वक्ताके द्वारा उसने कैसे अधिकारी वक्ताके मुखसे श्रीभागवत सुनी यों सम्प्रदायके वर्णनद्वारा स्वयंका योग्य अधिकारी होना सूचित किया गया.

(२) इस हीनाधिकारके प्रकरणके द्वितीयाध्यायमें कर्म एवं ज्ञान के बारेमें तथा भगवदवतारके प्रयोजन एवं लीला के बारेमें प्रश्न किया गया होनेसे श्रोताके भीतर मात्सर्य नहीं है, यह सूचित हुवा. इसी तरह इन जिज्ञासाओंका समाधान करने समर्थ ऐसे वक्ताका चातुर्य निरूपित किया गया है.

(३) इस हीनाधिकारके प्रकरणके तृतीयाध्यायमें रूपात्मक भगवान्के अवतारोंका निरूपण किया गया होनेसे श्रोताका श्रवणरूप साधनमें आदरभाव तथा वक्तामें वह गूढ़ रहस्योंको जानता होनेकी योग्यता दिखलायी गयी है.

यों श्रोता और वक्ता दोनोंके हीन या प्राथमिक अधिकारका यहां द्योतन हुवा है.

(४-६ तीन अध्यायोंवाला मध्यमाधिकारका द्योतक द्वितीय प्रकरण)

इसी तरह मध्यमाधिकारके अन्तर्गत निम्नलिखित गुण आवश्यक माने गये हैं :

१. भगवत्कृपा

२. भगवदीयता

और

३. भगवदेकाग्रता

ये तीनों गुण श्रोता एवं वक्ता दोनोंके भीतर अपेक्षित होते हैं. तदनुसार ही यहां भी तीन ही अध्याय योजित हुवे हैं.

(१) मध्यमाधिकारके प्रकरणके प्रथमाध्यायमें प्रस्तुत कथाकी प्रेरणाके हेतुभूत प्रसंगके निरूपणमें महर्षि वेदव्यासजीके भीतर भगवान्के द्वारा विचारित भगवदीयताका वर्णन किया गया है.

(२) मध्यमाधिकारके प्रकरणके द्वितीयाध्यायमें प्रश्नोंके उत्तर तथा कृति का निरूपण किया गया है. यों महर्षि वेदव्यास और देवर्षि नारद की कथारूपा साधनामें अपेक्षित भगवान्के द्वारा सम्पादित शरीरवाले होनेके निरूपण द्वारा उनका भगवदीय होना प्रतिपादित किया गया है.

(३) मध्यमाधिकारके प्रकरणके तृतीयाध्यायमें फलके निरूपणार्थ देवर्षि नारदकी भगवदीयता निरूपित की गयी है.

यों तीन अध्यायोंमें मध्यमाधिकारी यहां वर्णनीय माना गया है.

(७-१९ यों तेरह अध्यायोंवाला उत्तमाधिकारका द्योतक तृतीय प्रकरण)

उत्तमाधिकारमें तो चित्तकी भगवदेकतानताकी, अर्थात् भगवान्के अलावा अन्य विषयोंमें दृढ़ वैराग्यकी, अपेक्षा रहती है. इसी तरह क्योंकि पुरुषको द्वादशांग माना गया है; अतः, क्षरपुरुषसे अतीत और अक्षरपुरुषसे उत्तम ऐसे पुरुषोत्तम भगवान् ही भागवतके प्रमुखतया प्रतिपाद्य विषय हैं, यह जतानेको १३ अध्यायोंमें उत्तमाधिकारका निरूपण किया गया है.

(१) उत्तमाधिकारके प्रकरणके अन्तर्गत प्रथम, अर्थात् स्कन्धकी दृष्टिसे सातवें, अध्यायमें वर्णनीय उत्तमाधिकारी महाराजा परीक्षितके भीतर पुरुषपरम्परासे संभावित भी किसी तरहके दोषोंके न होनेकी कथाद्वारा उनका

उत्तमाधिकारी होना दिखलाया गया है.

(२) उत्तमाधिकारके प्रकरणके अन्तर्गत द्वितीय, स्कन्धादितया आठवें, अध्यायमें कुन्तीद्वारा की गयी भगवान्की स्तुतिका निरूपण किया गया है. एतावता ब्रह्मके स्वरूपके अज्ञानवश होनेवाले दुःखकी भगवान्की कृपाके कारण होती निवृत्ति तथा स्त्रीपरम्परावश भी महाराजा परीक्षितके उत्तम श्रोता होनेका निरूपण अभिप्रेत माना गया है.

(३) उत्तमाधिकारके प्रकरणके अन्तर्गत तृतीय, स्कन्धादितया नौमें, अध्यायमें युधिष्ठिरको भीष्मद्वारा दिया गया उपदेश वर्णित हुवा है. यह जीवके स्वरूपके बारेमें अज्ञानसे जो दुःख हो सकते हैं, उन्हें परम कृपालु भगवान्द्वारा निवृत्त किया जाना वर्णित हुवा है. अतः श्रोताके अन्नदाताके रूपमें जो पोषक हो उसकी दृष्टिसे भी श्रोताकी उत्तमता या निर्दोषता समझायी गयी है.

(४) इस प्रकरणके अन्तर्गत चतुर्थ, अर्थात् स्कन्धादिसे दसवें, अध्यायमें इस प्रकरणके प्रमुख श्रोताके सगे-सम्बन्धी भीम आदिकी भगवत्परताके वर्णनद्वारा सांसारिक दोषोंसे भी रहित होना प्रमुख श्रोता, महाराज परीक्षित, का सूचित किया गया है.

(५) इस प्रकरणके पांचवें, अर्थात् स्कन्धादि ग्यारहवें, अध्यायमें भगवान्के लीलाकार्यके सम्पन्न हो जानेके कारण भगवान्की सुखस्थिति और उसके कारण पार्थको भी भगवत्सुखके कारण सुखी दिखलानेके कारण आगन्तुक दोषोंका अभाव भी प्रकरणके प्रमुख श्रोताके सन्दर्भमें सूचित किया गया है.

(६) उत्तमाधिकारके इस प्रकरणके अन्तर्गत छठे, अर्थात् स्कन्धादिसे बारहवें, अध्यायमें भगवान्के द्वारा रक्षित पुत्रके प्राप्त होनेसे पार्थकी सविशेष सुखसम्पत्ति वर्णित हुयी है.

(७) इस सातवें, अर्थात् तेरहवें, अध्यायमें धृतराष्ट्रकी मुक्तिके वर्णनद्वारा बीजमुक्तिद्वारा दोषोंकी निवृत्ति निरूपित हुयी है.

(८) इस आठवें, अर्थात् चौदहवें, अध्यायमें बीजमुक्तिके कार्यतया पाण्डवोंके भी वैराग्यके वर्णनद्वारा प्राकरणिक श्रोताकी उत्तमताका ही निरूपण अभिप्रेत है.

(९) इस नौमें, अर्थात् पंद्रहवें, अध्यायमें वैराग्यके सांसारिक सुखोंसे विरक्त हो जानेके कारण पाण्डवोंकी मुक्ति निरूपित हुयी है. एतावता प्रकरणके प्रमुख श्रोताके भीतर पूर्वजोंके कृत कर्मोंका भी किसी तरहका प्रतिबन्ध नहीं बच गया यह दिखाना अभिप्रेत है.

(१०) इस दसवें, अर्थात् सोलहवें, अध्यायमें प्रकरणोपात्त प्रमुख श्रोता राजा परीक्षितके राज्यके निरूपणद्वारा राजाकी लौकिक सामर्थ्यका निरूपण अभिप्रेत है.

(११) इस ग्यारहवें, अर्थात् सत्रहवें, अध्यायमें धरणी और धर्म के हेतु कलियुगके निग्रहार्थ अपेक्षित अलौकिक सामर्थ्य प्रमुख श्रोतामें कितनी अधिक है, यह दिखलायी गयी है.

(१२) इस बारहवें, अर्थात् अठारहवें, अध्यायमें राज्यादिके त्यागके वर्णनार्थ त्यागके हेतुभूत वैराग्य और उस वैराग्यके हेतुभूत ऋषिपुत्रद्वारा दिये शापका निरूपण किया गया है.

(१३) इस तेरहवें, अर्थात् उन्नीसवें, अध्यायमें त्यागनिरूपणके प्रसंगमें त्याग और सत्संग के लाभ होनेपर प्रमुख श्रोताके द्वारा पूछे गये प्रश्न जो उसकी प्रमुख अधिकारिता सिद्ध करते हैं, उनका वर्णन किया गया है.

इस तरह प्रथम स्कन्ध १९ अध्यायवाले तीन प्रकरणोंवाला स्कन्ध है.

(द्वितीयस्कन्धके तीन प्रकरण)

साधनके निरूपणार्थ जो द्वितीय स्कन्ध है उसमें भी तीन ही प्रकरण हैं : १) तत्त्वध्यान २) हृदयके भीतर सहज प्रसन्नताका मनोभाव तथा ३) मनन.

(१-२ दो अध्यायोंवाला प्रथम १) तत्त्वध्यान का निरूपक प्रकरण)

श्रीभागवतमें प्रतिपाद्य तत्त्वके स्थूल और सूक्ष्म यों दो प्रभेद होते हैं अतः तत्त्वध्यानके निरूपणार्थ इस प्रकरणमें अध्याय भी दो समायोजित किये गये हैं.

(१) द्वितीय स्कन्धके तत्त्वध्यानके प्रकरणके अन्तर्गत प्रथम अध्यायमें स्थूलस्वरूपका ध्यान वर्णित हुआ है.

(२) इसी तरह द्वितीय अध्यायमें सूक्ष्म स्वरूपका ध्यान वर्णित हुआ है.

(३-४ दो अध्यायोंवाला २) हृदयके भीतर सहज प्रसन्नताके मनोभावका निरूपक द्वितीय प्रकरण)

साधकके भीतर श्रद्धा हो तो साधनोंके अनुष्ठानमें उसे हृदयके भीतर सहज प्रसन्नताके मनोभाव प्रकट होते हैं. यह श्रवणसाधना हो या कीर्तनसाधना दोनोंके बारेमें समानरूपेण अभिप्रेत तथ्य है. अतः इस प्रकरणमें भी दो अध्याय योजित हुये हैं.

(१) द्वितीय स्कन्धके अन्तर्गत दूसरे प्रकरणके प्रथम, अर्थात् आदिसे तीसरे, अध्यायमें वर्णनीय हृत्प्रसादके रूपमें श्रोताकी श्रद्धाका निरूपण अभिलषित है.

(२) द्वितीय स्कन्धके अन्तर्गत दूसरे प्रकरणके द्वितीय, अर्थात् आदितः चतुर्थ, अध्यायमें वक्ताकी श्रद्धाके निरूपण अभिप्रेत है.

(५-१० छह अध्यायोंवाला ३) मननरूप साधनका निरूपक तृतीय प्रकरण)

मनन, क्योंकि, दो तरहसे सम्भव होता है : जगत्के आधिभौतिक आध्यात्मिक आधिदैविक रूप उत्पन्न कैसे हुये, इस बातका विचार करनेके रूपमें. अथवा ऐसा जगत् स्वीकार्य या उपपन्न कैसे हो सकता है, इस तरहका विचार या मनन करना.

उत्पत्तिके बारेमें मनन :

इसके अन्तर्गत इस सृष्टिमें

१. जो अनित्य नाम-रूप-कर्मोंवाले पदार्थ दिखलायी देते हैं, उन्हें उत्पन्न हुआ माना जाता है.

२. इस सृष्टिमें जो पदार्थ नित्य अर्थात् किसी कालविशेषमें प्रतिनियत कोई एक नाम; या कोई एक रूप; अथवा किसी एक कर्म की इयत्तामें परिसीमित न होते हों पर जीवात्माओंकी तरह देशमें परिच्छिन्न दिखलायी देते हों उन्हें उत्पन्न होनेवाले नहीं माना जाता. वे तो तत्तद् देश-कालमें केवल आवागमन करते माने जाते हैं. यह आवागमन ही उनका जनन जैसा लगता है.

३. जो पदार्थ न देशमें अथवा तो न कालमें परिच्छिन्न होते हों, उनकी न तो उत्पत्ति सम्भव होती है और न

आवागमन ही. वे तो कहीं-कभी किसी रूपमें प्रकट होते हैं अथवा अप्रकट रहते हैं. यह प्राकट्य ही उनका जननके रूपमें स्वीकारा जाता है.

इस तरह उत्पत्ति-नाश आवागमन तथा प्राकट्य-अप्राकट्य के तीन प्रकारोंको भलीभांति जान लेनेपर अध्यायार्थोंका स्वरूप सुबोध हो जाता है.

(^१)उत्पत्तिके विमर्शकारी प्रकरणके अन्तर्गत प्रथम, अर्थात् आदितः पांचवें, अध्यायमें चौदह लोकोंकी रचनाके हेतु अनित्य महद्, अहंकार, मन, पांच तन्मात्रा, पांच ज्ञानेन्द्रिय, पांच कर्मेन्द्रिय तथा पांच महाभूत ब्रह्माण्डकी उत्पत्तिमें कारणभूत तत्त्व माने गये हैं. उनके जननका निरूपण इस अध्यायमें है.

(^२)उत्पत्तिके विमर्शकारी प्रकरणके अन्तर्गत दूसरे, अर्थात् आदितः छठे, अध्यायमें सनातन जीवात्मा जो कालतः तो अपरिच्छिन्न होनेपर भी अणुपरिमाण होनेके कारण देशतः परिच्छिन्न होती है. उनका समष्टि ब्रह्माण्ड या व्यष्टि शरीर में आवागमनरूप जनन होता है.

यहीं ऋग्वेदीय पुरुषसूक्तमें प्रतिपाद्य निरूपणका भी अनुवाद मिलता होनेसे जीवात्माओंके लिये भगवद्भजन सर्वफलोंका साधक होता है, यह भी सूचित किया गया है.

(^३)उत्पत्तिके विमर्शकारी प्रकरणके अन्तर्गत तीसरे, अर्थात् आदितः सातवें, अध्यायमें भगवान्का मूलस्वरूपमें भजन सिद्ध हो पाये तदर्थ; तथा भगवान्के देश-काल दोनोंमें अपरिच्छिन्न होनेके कारण, भगवान्का प्राकट्यरूप जनन वर्णनीय माना गया है.

इस तरह आविर्भाव या उत्पत्ति के तीन प्रकारोंके निरूपणके बाद अब उपपत्तिका मनन अग्रिम अध्यायोंमें अभिप्रेत है.

उपपत्तिके बारेमें मनन :

उपपत्तिके हेतुओंके मननके भी तीन अंग दिखलाये गये हैं : १.आशंका २.उत्तर एवं ३.फल. अतः एतदर्थ भी तीन अध्याय समायोजित हुवे हैं.

(^१)उपपत्तिके विमर्शकारी प्रकरणके अन्तर्गत प्रथम, अर्थात् आदितः आठवें, अध्यायमें यह विचार हुवा है कि जो कुछ अभी तक प्रतिपादित किया गया, अर्थात् जीवात्माके आवागमनरूप जन्मके समय या परमात्माके प्राकट्यरूप जन्मके समय प्रतीत होता अचेतन देहोंके साथ सम्बन्ध कैसे उपपन्न हो सकता है ? ऐसी आशंका इस अध्यायमें निरूपित हुयी है.

(^२)उपपत्तिके विमर्शकारी प्रकरणके अन्तर्गत द्वितीय, अर्थात् आदितः नौमें, अध्यायमें जीवात्मा या परमात्मा का देहसे सम्बन्ध कैसे जुड़ सकता है, ऐसी शंकाका परिहार अर्थात् उत्तर निरूपित किया गया है.

(^३)उपपत्तिके विमर्शकारी प्रकरणके अन्तर्गत तृतीय, अर्थात् आदितः दसवें, अध्यायमें इन शंका-समाधानोंद्वारा फलित होते निष्कर्षतया श्रीभागवतकथाका श्रवण अवश्य करना चाहिये, ऐसा प्रतिपादित हुवा.

यों दो-दो अध्यायोंवाले प्रथम-द्वितीय प्रकरण तथा छह अध्यायोंवाला अन्तिम तृतीय प्रकरण, कुल मिला कर, दस अध्यायोंमें द्वितीय स्कन्धके अन्तर्गत साधनका निरूपण किया गया है.

(तृतीयस्कन्धार्थ सर्गलीला)

प्रथम स्कन्धमें उत्तम मध्यम तथा आदिम प्रकारके श्रवणाधिकार और द्वितीय स्कन्धमें तत्त्वध्यान हृत्प्रसाद और मनन रूप तीन साधनोंके निरूपणके बाद अब इस स्कन्धमें भगवान्की दस लीलाओंमेंसे प्रथम सर्गरूपा लीलाका निरूपण अभिप्रेत है. लौकिक सर्ग और अलौकिक सर्ग दोनों ही तैत्तिरीय तरहके दिखलाये गये हैं. जैसे कि बृहदारण्यकोपनिषद्के “देवता कितने होते हैं ? आठ वसु, ग्यारह रुद्र, बारह आदित्य, यों इकत्तीसके बाद बत्तीसवां इन्द्र और तैत्तिरीयवां प्रजापति” (बृह.उप.३।१।१-२) इस वचनके अनुसार स्पष्ट है. इसी तरह अट्ठाईस तत्त्व, चार तरहके उद्भिज्ज अण्डज जरायुज और स्वेदज यों चार तरहके भूतबीज की गणना करनेपर ३२ और ३३ वां काल यों लौकिक सर्ग भी तैत्तिरीय तरहका माना गया है. अतः लौकिकालौकिक अथवा बन्धमोक्ष के प्रभेदवश दो प्रकरणोंमें और तैत्तिरीय अध्यायोंवाला यह स्कन्ध है.

(प्रकारान्तर)

^१गुणातीतसृष्टि, ^२सगुणसृष्टि, ^३कालसृष्टि, ^४जीवसृष्टि और ^५तत्त्वसृष्टि यों पांचों तरहकी सृष्टिके अन्तर्गत एक प्रकार मोक्षार्थ सृष्टिका और दूसरा प्रकार बन्धार्थ सृष्टिका यों कुल मिला कर दस प्रकरणोंवाला भी स्कन्ध माना जाता है.

(तृतीयस्कन्धमें बन्धसृष्टिके निरूपणार्थ १-६ अध्यायोंवाला गुणातीतसृष्टिका प्रथम प्रकरण)

इस प्रथम प्रकरणका प्रथम अध्याय गुणातीत तत्त्वके वर्णनार्थ है.

(१) इस अध्यायमें अधिकारके प्रसंगवश प्रतिबन्धकी निवृत्ति तीर्थसेवन सत्संगप्रीति भगवान्के बारेमें प्रश्नात्मिका उत्कण्ठा या जिज्ञासा के रूपमें बाह्यशुद्धि निरूपित हुयी है.

(२) दूसरा अध्याय गुणातीत कार्यके वर्णनार्थ है. इसमें भगवत्कथाके श्रवणवशात् शास्त्रीय रीतिके अनुसार भगवान्के माहात्म्यका ज्ञान हुवा वह आभ्यन्तर शुद्धिका निरूपण है.

(३) तीसरा अध्याय प्रतिबन्धोंकी निवृत्तिके द्वारा उत्तमोत्तमाधिकाररूप श्रवणके अधिकारके वर्णनार्थ है. इसमें केवल भगवच्चरित्रके श्रवणके कारण आन्तरिक ज्ञानरूप भगवद्गुणोंका प्रकट होना प्रतिपादित हुवा है.

(४) चौथा अध्याय उक्त अधिकारीकी शुद्धिके वर्णनार्थ है. इसमें भगवान्के प्रयाणके समय विद्यमान अधिकारी उद्धवकी तरह अविद्यमान विदुर पर भी, यों दोनोंपर भगवान्के प्रसादका वर्णन अभिप्रेत है.

(५) पांचवां अध्याय तीर्थाटनरूप उसके अधिकारानुरूप साधनके निरूपणार्थ है. इसमें ब्रह्माण्डके कारणीभूत महद् आदि तत्त्वोंकी उत्पत्तिका निरूपण स्तुतिद्वारा किया गया है.

(६) छठा अध्याय उस उत्तमोत्तम अधिकारीकी श्रवणासक्तिके निरूपणार्थ है. इसमें महद् आदि तत्त्वोंके कार्यभूत ब्रह्माण्डरूप शरीरकी उत्पत्तिके वर्णन करनेवालोंके कर्मका निरूपण किया गया है.

यों छह अध्यायोंवाले इस प्रथम प्रकरणके बाद अब दूसरा प्रकरण तीन अध्यायोंका है.

(तृतीयस्कन्धमें बन्धसृष्टिके निरूपणार्थ ७-९ अध्यायोंवाला सगुणसृष्टिका द्वितीय प्रकरण)

प्रकृतिके तीन, सात्त्विक राजस एवं तामस, गुणोंके कारण सगुणसृष्टिका भी निरूपण तीन प्रकारसे इन अध्यायोंमें यहां करना अभिप्रेत माना गया है.

(१) इस सगुणसृष्टिके निरूपणके प्रकरणके प्रथम, अर्थात् आदितः सातवें, अध्यायमें शंका-समाधानके रूपमें मतान्तरके आधारपर सृष्टि और भगवान् के बीचमें गुणोंके प्रवेशका वर्णन किया गया है.

(२) द्वितीय, अर्थात् आदितः आठवें, अध्यायमें चतुर्मुख ब्रह्माजीको जो उनके हृदयमें जगत्कारणरूप भगवान्के दर्शन हुवे उसके कारण वे सृष्टिकर्ता बने, ऐसा समझाया गया है.

(३) तृतीय, अर्थात् आदितः नौवें, अध्यायमें जो सृष्टि अवश्यभावी थी उसकी उत्पत्ति सफलतया हो पाये, तदर्थ ब्रह्माजी द्वारा की गयी स्तुतिका वर्णन है.

यों तीन अध्यायोंवाले दूसरे प्रकरणके बाद अब दो अध्यायोंवाला तीसरा प्रकरण आता है.

(तृतीयस्कन्धमें बन्धसृष्टिके निरूपणार्थ १०-११ अध्यायोंवाला कालसृष्टिका तृतीय प्रकरण)

इस कालसृष्टिके प्रकरणमें, क्योंकि, कालके स्थूल और सूक्ष्म यों दो प्रभेद होते हैं, अतः दो अध्यायोंमें वर्णन अभिलषित है.

(१) इस कालसृष्टिके प्रकरणके पहले, अर्थात् आदितः दसवें, अध्यायमें दशविध सर्गरूप कार्यके रूपमें कालके जन्मका वर्णन हुवा है.

(२) दूसरे, अर्थात् आदितः ग्यारहवें, अध्यायमें परमाणुसे लेकर परार्थ संख्याकी उपाधिवाले कालके जन्मका निरूपण अभिप्रेत है.

अमुक्त जीव कालके आधीन ही रहते होनेसे उनका निरूपण कालसृष्टिके वर्णनके अन्तर्गत ही यहां कर दिया गया है.

(तृतीयस्कन्धमें बन्धसृष्टिके निरूपणार्थ १२ वें अध्यायवाला मुक्तजीवकी सृष्टिका चतुर्थ प्रकरण)

इस चौथे प्रकरणमें मुक्तजीवकी सृष्टिका वर्णन एक ही अध्यायमें किया गया है.

(१) इस बारहवें एक अध्यायरूप प्रकरणमें लोकातीत एवं लौकिक मुक्त जीवकी सृष्टिका निरूपण और इसी तरह इनके अंगरूपेण नामसृष्टिके प्राकट्यका भी निरूपण अभिप्रेत है.

(तृतीयस्कन्धमें बन्धसृष्टिके निरूपणार्थ १३-१९ यों कुल सात अध्यायोंवाला पांचवां प्रकरण)

मुक्ति, क्योंकि, बन्धसे मुक्ति होनेके अर्थमें अपेक्षित है. अतः इस बन्धसृष्टिके अवान्तर प्रकरणमें प्रथम अध्यायसे लेकर उन्नीसवें अध्याय तक बन्धसृष्टिका वर्णन किया गया है.

(१) इसके प्रथम, अर्थात् आदितः तेरहवें, अध्यायमें सारे तत्त्वोंकी आधारभूत भूमिके उद्धारार्थ वराहकल्पके निरूपण द्वारा मुक्तजीवोंकी सृष्टिमें उपपत्तिका निरूपण किया गया है.

- अग्रिम छह अध्यायोंमें विस्तारपूर्वक जन्म-मरणात्मक संसारका निरूपण अभिप्रेत है. तदनुसार
- (२) दूसरे, अर्थात् आदितः चौदहवें, अध्यायमें मुक्तजीवोंकी सृष्टिकी उपपत्तिके प्रयोजनवश स्रध्याकालमें कामके द्वारा आसुरी बीजके जननका वर्णन किया गया है.
- (३) अतएव इस उपपत्तिके अंगतया तीसरे, अर्थात् आदितः पंद्रहवें, अध्यायमें ब्रह्मशापवश वैकुण्ठस्थित पार्षदोंका आसुरबीजमें समागमन प्रतिपादित हुवा है.
- (४) चौथे, अर्थात् आदितः सोलहवें, अध्यायमें भगवान्द्वारा शाप प्रदान करनेवालेको सान्त्वनाप्रदान और अपने पार्षद जय-विजयके भीतर भगवद्विभूतिके आवेशका निरूपण अभिप्रेत है.
- (५) उपपत्तिनिरूपणके अंगतया पांचवें, अर्थात् आदितः सत्रहवें, अध्यायमें सृष्टिमें अतिशयित उत्कर्ष नाशका बीज बनता है यह दिखाना अभिप्रेत है.
- (६) इस उपपत्तिके प्रसंगवश छठे, अर्थात् आदितः अठारहवें, अध्यायमें दैत्यका भगवान्के साथ जो युद्ध हुवा उसकी विनाशकथा वर्णित हुयी है.
- (७) इसी उपपत्तिके निरूपणार्थ इस सातवें, अर्थात् आदितः उन्नीसवें, अध्यायमें दैत्यनाशनकी कथा पूर्ण हुयी. इस तरह सात अध्यायोंवाले इस पांचमें अवान्तर प्रकरणके बाद अब चार अध्यायोंवाला छठ्ठा प्रकरण आता है.

(तृतीयस्कन्धमें मुक्तसृष्टिके निरूपणार्थ २०-२४ अध्यायोंवाला तत्त्वमुक्तिका छठ्ठा प्रकरण)

इस छठ्ठे अवान्तर प्रकरणकी अध्याययोजना निम्नलिखित रूपमें है. इस प्रकरणमें प्रथम, अर्थात् आदितः बीसवां अध्याय, क्योंकि अग्रिम चार अध्यायोंमें पुरुषकी मुक्तिका निरूपण अभिप्रेत है अतः, मुक्तसृष्टिके उपक्रमार्थ योजित है. शेष चार अध्यायोंमें पुरुषकी मुक्तिके निरूपण द्वारा ही, पुरुषद्वारा त्यक्त तत्त्व पुनः अपरिगृहीत स्वस्वरूपमें अवस्थित हो जाते होनेसे तत्त्वमुक्तिका निरूपण भी द्योतित हो गया है.

- (१) यहां प्रथम, अर्थात् आदितः बीसवें, अध्यायमें सात्त्विक राजस और तामस के इतरेतरगुणित नौ प्रकार सगुणावस्थाके और दसमी निर्गुणावस्थाके प्रभेदके अनुसार भगवच्चिन्तनमें भी सगुण और निर्गुण यों दो तरहके स्वभाव प्रकट होते हैं. इन्हींके आधारपर मोक्ष उपपन्न होता होनेसे मुक्तसृष्टि भी उपपन्न हो जाती है.
- (२) द्वितीय, अर्थात् आदितः इक्कीसवें, अध्यायमें मोक्षसृष्टिके प्रकरणके अन्तर्गत तत्त्वमुक्तिके अवान्तरप्रकरणमें भोगसहित मोक्षके वर्णनके प्रसंगमें कर्दम और मनु की धर्मसिद्धियोंका निरूपण किया गया है.
- (३) तृतीय, अर्थात् आदितः बाईसवें, अध्यायमें भोगसहित मोक्षके निरूपणतया ऐहिक-आमुष्मिक उत्कर्षवाले मनुके कन्यालाभ और कर्दमके अर्थलाभ का निरूपण किया गया है.
- (४) चौथे, अर्थात् आदितः तेईसवें, अध्यायमें कर्दमकी भोगसहित मुक्तिके वर्णनके अन्तर्गत कामनाओंकी पूर्तिकी कथा वर्णित हुयी है.
- (५) पांचवें, अर्थात् आदितः चौबीसवें, अध्यायमें कर्दम ऋषिके सांख्यके फलरूप मोक्षकी प्राप्ति का निरूपण किया गया है. अर्थात् सांख्यकी प्रक्रियाद्वारा पुरुषके प्राकृत गुणोंसे मुक्त होनेपर प्राकृत तत्त्व वैराग्यवश छूट जाते होनेसे उन तत्त्वोंकी मुक्ति हो जाती है.

इस तरह पांच अध्यायोंवाले इस प्रकरणके बाद अब एकाध्यायात्मक सातवां प्रकरण आता है.

(तृतीयस्कन्धमें मुक्तसृष्टिके निरूपणार्थ २५ वें अध्यायवाला कालमुक्तिका सातवां प्रकरण)

जो गुणातीत या भगवदधीन होते हैं उनकी मुक्ति तो भक्तिरूपा ही मानी जाती है. अतः

(^१) इस एकाध्यायात्मक प्रकरणमें भक्तिके मुख्य स्वरूपका निरूपण किया गया है. यह पुनः कालमुक्तिके रूपमें अभिप्रेत है.

इस एकाध्यायात्मक प्रकरणके बाद अब दो अध्यायोंवाला प्रकरण आता है.

(तृतीयस्कन्धमें मुक्तसृष्टिके निरूपणार्थ २६-२७ अध्यायोंवाला गुणातीतमुक्तिका आठवां प्रकरण)

इस प्रकरणके दो अध्यायोंमें अज्ञाननिवृत्तिरूप ज्ञानका निरूपण अभिलषित है. यह गुणातीतमुक्तिलीलाका प्रकरण है.

(^१) यहां प्रथम, अर्थात् आदितः छब्बीसवें, अध्यायमें सांख्यशास्त्रीय प्रक्रियाके अनुसार उत्पत्ति तथा उपपत्ति दोनोंके आधारपर अप्राकृत आत्माकी भिन्नताके निरूपण द्वारा गुणातीत आत्माकी मुक्तिका वर्णन किया गया है.

(^२) यहां इस द्वितीय, अर्थात् आदितः सत्ताईसवें, अध्यायमें सांख्यशास्त्रके आधारपर ज्ञान और उसके साधनतया उपपत्तियोंका निरूपण किया गया है.

(तृतीयस्कन्धमें मुक्तसृष्टिके निरूपणार्थ २८वें अध्यायवाला सगुणमुक्तिका नौवां प्रकरण)

यह पुनः एकाध्यायात्मक प्रकरण है.

(^१) इस प्रकरणके अन्तर्गत एक अध्यायमें योगका निरूपण किया गया है.

यह सगुणोंकी मुक्तिलीलाके रूपमें है. क्योंकि सगुणसृष्टि तत्तद् भावोंके साथ निर्मित हुयी होती है. अतः उनकी भीति उनके वैसे भावोंसे मुक्त होनेपर और स्वयं अपने स्वरूपमें अवस्थित होनेपर होती है. यह जबतक चित्तवृत्तिओंका निरोध न हो तबतक शक्य न होनेके कारण योगसाधनाके निरूपणद्वारा मुक्तिलीलाका निरूपण यहां अभिलषित माना गया है.

(तृतीयस्कन्धमें मुक्तसृष्टिके निरूपणार्थ २९-३३ अध्यायोंवाला जीवमुक्तिका दसमां प्रकरण)

इस प्रकरणमें पांच अध्याय योजित हुवे हैं. प्रथम, अर्थात् २९वें अध्यायमें, योगकी अंगभूता भक्तिका निरूपण अभिप्रेत है. अग्रिम दो अर्थात् ३०-३१ अध्यायोंमें वैराग्यका निरूपण अभिलषित है. एतावता जीवकी मुक्तिलीलाका यह प्रकरण फलित होता है. अवशिष्ट दो अर्थात् ३२-३३ अध्यायोंमें स्त्रीमुक्तिका वर्णन अभिप्रेत है.

(^१) यहां प्रथम, अर्थात् आदितः उनत्तीसवें, अध्यायमें मोक्षसृष्टिके प्रकरणमें जीवमुक्तिके प्रसंगवश सभीका साधन बन पाये ऐसी चार प्रकारकी भक्ति और वैराग्य के अंगतया भयंकर कालके माहात्म्यका निरूपण किया गया है.

(^२) द्वितीय, अर्थात् आदितः तीसवें, अध्यायमें संसारमें भयवश प्रकटे वैराग्यके उद्बोधनार्थ मृत्युरूप दोषका निरूपण किया गया है.

(^३) तृतीय, अर्थात् आदितः इकत्तीसवें, अध्यायमें पूर्वोक्त कालजनित मृत्युजनित वैराग्यके ही उद्बोधनार्थ पुनर्जन्मरूप दोषका निरूपण अभिप्रेत है.

(४) चौथे, अर्थात् आदितः बत्तीसवें, अध्यायमें इन्हीं सारी बातोंके उपसंहारार्थ सर्वशेषरूप अन्य भी सारी बातें समझायी गयी हैं.

(५) पांचवें, अर्थात् आदितः तैंतीसवें, अध्यायमें मुक्तसृष्टिके प्रकरणके अनुरूप सर्गरूप फलके बोधक योगसाधनाद्वारा देवहूतिको मिले मोक्षका निरूपण किया गया है.

इस तरह १९ अध्यायोंवाली बन्धसृष्टि और १४ अध्यायोंवाली मुक्तिसृष्टि यों कुल मिला कर ३३ अध्यायोंवाले दस प्रकरणोंमें तृतीय स्कन्धमें सर्गलीला निरूपित हुयी है.

यहां श्रीशुकदेवजी और मैत्रेय की सर्गनिरूपणकी रीति अलग-अलग होनेसे प्रकरण एवं अध्याय के मूलार्थमें अन्तर पड़ जाता है. अतः मैत्रेयकी निरूपणरीतिके अनुसार सर्गलीलाके अन्तर्गत चार प्रकरण यों हैं :

^१ अधिकारप्रकरण, सृष्टिप्रकरण, उपपत्तिप्रकरण और फलप्रकरण.

इनमें जो सृष्टिप्रकरण है वह ^२ गुणातीतसृष्टि, ^३ सगुणसृष्टि, ^४ कालसृष्टि, ^५ तत्त्वसृष्टि और ६ जीवसृष्टि रूपी पांच प्रकरणोंवाला है.

इसके बाद आनेवाले उपपत्तिके प्रकरणमें ^{७/क} बन्धसृष्टि और ^{७/ख} मोक्षसृष्टि के प्रभेदवश दो तरहके अवान्तरप्रकरण हैं.

फलप्रकरणमें मुक्तिका प्रतिपादन किया गया है. यह मुक्ति ^८ भक्ति ^९ सांख्य और ^{१०} योग के तीन प्रभेदवश तीन तरहसे प्रतिपादित हुयी है. इस तरह तृतीयस्कन्ध दस प्रकरणोंवाला मैत्रेयमतके अनुसार प्रतिपादित हुवा है.

इस फलप्रकरणमें भक्तिके अवान्तरप्रकरणके पुनः पुंमुक्ति और सफला मुक्ति यों दो अवान्तरप्रकरण हैं. सांख्यमें अवान्तरप्रकरण नहीं है परन्तु योगप्रकरणके अन्तर्गत पुनः स्वयं योग वैराग्य सर्वनिर्धार और स्वयं मुक्ति रूप चार अवान्तरप्रकरण माने गये हैं.

यों श्रीशुकदेवजीके अभिप्रायके अनुसार स्थूलदृष्टिसे पांच प्रकरण सूक्ष्मदृष्टिसे दस प्रकरण बनते हैं. जबकि मैत्रेयजीके अनुसार स्थूलदृष्टिसे चार प्रकरण और सूक्ष्मदृष्टिसे दस प्रकरण बनते हैं. यह दोनों दृष्टियोंका प्रभेद है.

०००००+०००००

(चतुर्थस्कन्धार्थ विसर्गलीला)

इस विसर्गलीलाके अन्तर्गत इकत्तीस देवताओंकी सृष्टि निरूपणीय होनेसे अलौकिक विसर्गका इकत्तीस अध्यायोंमें निरूपण हुवा है. इनमें बारह आदित्य ग्यारह रुद्र और आठ वसु यों कुल मिला कर इकत्तीस संख्याका जोड़ है. विसर्गलीलाके अन्तर्गत भगवान्का यह माहात्म्य दिखलाना अभिप्रेत है कि विसर्गलीलाके कर्ता भगवान्ने इस विसर्गलीलाको पुरुषार्थरूपा बनानेको अर्थात् विसृष्ट जीवात्माओंको चतुर्विध पुरुषार्थ प्रदान करनेका प्रकार भी समायोजित किया है. अतएव चतुर्थ स्कन्ध चार प्रकरणोंद्वारा विसर्गलीलाके वर्णनार्थ है.

(विसर्गलीलाके वर्णनार्थ चतुर्थस्कन्धके अन्तर्गत सात अध्यायोंवाला धर्मरूप पुरुषार्थका प्रथम प्रकरण)

यह विसर्गलीला दक्षकी सोमयज्ञात्मिका धर्मसाधनाके रूपमें वर्णित हुयी है. इस सोमयज्ञात्मिका धर्मसाधनामें सात तरहकी यज्ञसंस्था श्रुति-स्मृति दोनोंके आधारपर स्वीकारी गयी हैं : अग्निष्टोम उक्थ षोडशी अप्तोर्याम अतिरात्र

अत्यग्निष्टोम और वाजपेय. अतएव यहां भी सात अध्याय समायोजित हैं.

(१) इस प्रकरणके प्रथम अध्यायमें यह वर्णित हुआ है कि कैसे स्वायंभुव मनु और शतरूपा की 'आकूति' 'देवहूति' और 'प्रसूति' नामोंवाली तीन कन्याओंके जन्म हुआ. कैसे आकूतिका प्रजापति रुचिके साथ विवाह हुआ. उनके दाम्पत्यवश जनमनेवाले यज्ञरूपी पुत्रको नाना स्वायंभुव मनुने अपना यथाविधि पुत्र बना लिया. अतः पुत्री दक्षिणाका विवाह अपने मामा यज्ञके साथ हुआ. इसी तरह मनुकी तीसरी कन्या प्रसूतिका विवाह ब्रह्माजीके पुत्र दक्षके साथ हुआ. इस विवाहके द्वारा सोलह कन्याओंका जन्म हुआ. इनमें से श्रद्धा मैत्री दया शान्ति तुष्टि पुष्टि क्रिया उन्नति बुद्धि मेधा तितिक्षा ही और मूर्ति नामोंवाली तेरह कन्या धर्मरूपी वरको प्रदान की गयी. शेष तीन कन्या अग्नि पितृगण और भव=महादेवजी को प्रदान की गयी. इनमें से महादेवकी पत्नी दक्षात्मजा सतीका उनके पिता दक्षके यज्ञमहोत्सवमें अपमानरूप अनर्थके कारण दक्षयज्ञका रुद्रगणोंद्वारा ध्वंस किये गया, यह कथा उपक्रमरूप प्रथमाध्यायमें धर्मपुरुषार्थके प्रकरणके अन्तर्गत निरूपित हुयी है.

(२) धर्मपुरुषार्थके प्रकरणके अन्तर्गत द्वितीयाध्यायमें ससुर दक्ष और जमाई श्रीमहादेव के बीच परस्पर वैमनस्यके हेतुभूत प्रसंगकी कथा वर्णित हुयी है.

(३) धर्मपुरुषार्थके प्रकरणके अन्तर्गत तृतीयाध्यायमें दक्षयज्ञमें आमन्त्रण न दिये जानेपर भी तथा श्रीमहादेवको वह अभिप्रेत न होनेपर भी दक्षात्मजा सतीके संमिलित होनेकी कथा वर्णित हुयी है.

(४) धर्मपुरुषार्थके प्रकरणके अन्तर्गत चतुर्थाध्यायमें अपने पिता द्वारा अपने पतिकी निन्दा सुन न पानेके कारण सतीके द्वारा योगाग्निसे यज्ञमण्डपमें देहोत्सर्ग रूपी अनर्थकी कथा निरूपित हुयी है.

(५) धर्मपुरुषार्थके प्रकरणके अन्तर्गत पांचवें अध्यायमें ऐसे अनर्थफलस्वरूप दक्षयज्ञका रुद्रगण वीरभद्रद्वारा ध्वंस किये जाना तथा इस कारण हुवे युद्धमें देवगणोंकी भी रुद्रगणोंके हाथों पराजयकी कथा वर्णित हुयी है.

(६) धर्मपुरुषार्थके प्रकरणके अन्तर्गत छठे अध्यायमें पराजित देवगणोंका ब्रह्माजीके समक्ष अपनी दुर्दशाका विज्ञापन, ब्रह्माजीद्वारा रुद्रका अनुनय करनेकी प्रेरणा तथा उस यज्ञानुष्ठानमें देवगणोंद्वारा रुद्रके भागको मान्यता प्रदान करनेके निर्णयकी कथा वर्णित हुयी है.

(७) धर्मपुरुषार्थके प्रकरणके अन्तर्गत सातवें अध्यायमें श्रीहरिके उस यज्ञमें प्रकट होनेपर सभी देव आदि गणोंद्वारा उनकी स्तुति की जानी और उससे प्रसन्न हो कर भगवान्ने उस यज्ञके अनुष्ठानको परिपूर्ण बनाया, उसकी कथा निरूपित हुयी है.

इस धर्मपुरुषार्थके प्रकरणके बाद अर्थपुरुषार्थका पांच अध्यायोंवाला दूसरा प्रकरण प्रारम्भ होता है :

(विसर्गलीलाके वर्णनार्थ चतुर्थस्कन्धके अन्तर्गत पांच अध्यायोंवाला दूसरा अर्थरूप पुरुषार्थका प्रकरण)

विसर्गलीलाके वर्णनमें अर्थपुरुषार्थके सिद्धिकी लीलाका वर्णन अभिप्रेत है. तदनुसार

(८) प्रथम, अर्थात्, स्कन्धादिसे आठवें अध्यायमें भक्त बालक ध्रुवकी ^कसाधना, अर्थात्, ध्रुव राजकुमारकी अति उग्र तपस्या तथा भगवत्परिचर्या आदि साधनोंका निरूपण किया गया है.

(९) विसर्गलीलाके वर्णनमें अर्थपुरुषार्थरूप प्रकरणमें द्वितीय, अर्थात् स्कन्धादिसे नौवें, अध्यायमें ^खसाध्य, अर्थात्, भगवान्का प्रादुर्भूत हो कर वरप्रदान करना आदि तथा इसके द्वारा सिद्ध होते अर्थपुरुषार्थकी कथा वर्णित हुयी है.

(१०) विसर्गलीलाके वर्णनमें अर्थपुरुषार्थरूप प्रकरणमें तृतीय, अर्थात् स्कन्धादिसे दसवें, अध्यायमें ^गराज्यके प्रशासनार्थ आवश्यक यक्षादिके वधरूप दोष, अर्थात्, ध्रुवके क्रोधावेशवश युद्ध आदि राजदोषोंका निरूपण हुआ है.

(११) विसर्गलीलाके वर्णनमें अर्थपुरुषार्थरूप प्रकरणमें चौथे, अर्थात् स्कन्धादिसे ग्यारहवें, अध्यायमें ^४मनूपदेशके कारण उन दोषोंकी निवृत्ति तथा ^५फलप्राप्ति, अर्थात् अर्थपुरुषार्थके सिद्धिकी कथा वर्णित हुयी है।

(१२) विसर्गलीलाके वर्णनमें अर्थपुरुषार्थरूप प्रकरणमें पांचवें, अर्थात् स्कन्धादिसे बारहवें, अध्यायमें भक्त ध्रुवको भगवत्पदकी प्राप्तिरूप फलका निरूपण अभिप्रेत है।

इस तरह पांच प्रकारसे अर्थपुरुषार्थकी कथाका वर्णन भी पांच अध्यायोंमें किया गया है। अब तीसरे कामपुरुषार्थकी सिद्धिकी कथा अग्रिम ग्यारह अध्यायोंमें की जानी है।

(विसर्गलीलाके वर्णनार्थ चतुर्थस्कन्धके अन्तर्गत ग्यारह अध्यायोंवाला तीसरा कामरूप पुरुषार्थका प्रकरण)

पांच ज्ञानेन्द्रिय पांच कर्मेन्द्रिय और मन या अन्तःकरण यों ग्यारह प्रकारसे प्रकट होता होनेसे इस प्रकरणमें ग्यारह अध्याय समायोजित हैं। यहां कामवश पृथुकी कथामें, सर्वकाम और स्वकाम रूपी दो अवान्तर प्रकरण हैं।

(१३) विसर्गलीलाके वर्णनमें कामपुरुषार्थरूप प्रकरणके अन्तर्गत सर्वकामरूप अवान्तर प्रकरणके प्रथम, अर्थात् स्कन्धादिसे तेरहवें, अध्यायमें ध्रुवका वंश और उस वंशमें जनमें साधु प्रकृतिके राजा अंग और उनके असाधु प्रकृतिवाले पुत्र अत्याचारी वेनके दुर्गणोंसे त्रस्त अंग राजाके राज्यत्यागकी कथाका निरूपण किया गया है।

(१४) विसर्गलीलाके वर्णनमें कामपुरुषार्थरूप प्रकरणके अन्तर्गत सर्वकामरूप अवान्तर प्रकरणमें द्वितीय, अर्थात् स्कन्धादिसे चौदहवें, अध्यायमें प्रजापर वेनके अत्याचार और उस अत्याचारसे प्रजाकी रक्षाके हेतु ऋषियोंद्वारा वेनके विनाश किये जानेके कारण प्रजाके बीचमें कोई रक्षक न बच जानेसे अधर्माभिवृद्धिवश लोकोपद्रव रूपी कार्यका वर्णन किया गया है।

(१५) विसर्गलीलाके वर्णनमें कामपुरुषार्थरूप प्रकरणके अन्तर्गत सर्वकामरूप अवान्तर प्रकरणके तृतीय, अर्थात् स्कन्धादिसे पंद्रहवें, अध्यायमें ब्रह्मर्षियों द्वारा भगवदंशरूप महाराजा पृथुका प्रादुर्भावन और उनके सुप्रशासनके गुणोंके निरूपणकी कथा है।

(१६) विसर्गलीलाके वर्णनमें कामपुरुषार्थरूप प्रकरणके अन्तर्गत सर्वकामरूप अवान्तर प्रकरणके चौथे, अर्थात् स्कन्धादिसे सोलहवें, अध्यायमें महानुभाव राजा पृथुके भीतर भगवदावेशके कारण दिव्य गुणोंके निरूपणकी कथा है।

(१७) विसर्गलीलाके वर्णनमें कामपुरुषार्थरूप प्रकरणके अन्तर्गत सर्वकामरूप अवान्तर प्रकरणके पांचवें, अर्थात् स्कन्धादिसे सत्रहवें, अध्यायमें महाराजा पृथुका भूमिको डरानेके हेतु शरःसन्धान करनेपर भूमिद्वारा महाराजा पृथुकी स्तुतिकी कथा प्रतिपादित हुयी है।

(१८) विसर्गलीलाके वर्णनमें कामपुरुषार्थरूप प्रकरणके अन्तर्गत सर्वकामरूप अवान्तर प्रकरणके छठे, अर्थात् स्कन्धादिसे अठारहवें, अध्यायमें महाराजा पृथुद्वारा भूमिके भलीभांति दोहनसे पुनः उर्वरा बनी पृथ्वीपर व्रज घोष ग्राम पुर पत्तन दुर्ग आदिके संरचनाद्वारा सभीकी कामनापूर्तिकी कथा वर्णित हुयी है।

(१९) विसर्गलीलाके वर्णनमें कामपुरुषार्थरूप प्रकरणके अन्तर्गत स्वकामरूप अवान्तर प्रकरणके सातवें, अर्थात् स्कन्धादिसे उन्नीसवें, अध्यायमें महाराजा पृथुद्वारा सौ अश्वमेध यज्ञोंके अनुष्ठानरूपा शुद्धिकी कथा निरूपित हुयी है।

(२०) विसर्गलीलाके वर्णनमें कामपुरुषार्थरूप प्रकरणके अन्तर्गत स्वकामरूप अवान्तर प्रकरणके आठवें, अर्थात् स्कन्धादिसे बीसवें, अध्यायमें महाराजा पृथुपर भगवान्द्वारा प्रकट किये गये प्रसादकी कथा वर्णित हुयी है।

(२१) विसर्गलीलाके वर्णनमें कामपुरुषार्थरूप प्रकरणके अन्तर्गत स्वकामरूप अवान्तर प्रकरणके नौवें, अर्थात् स्कन्धादिसे इक्कीसवें, अध्यायमें यज्ञकी रक्षाके रूपमें स्वधर्मके उपदेशकी कथा कही गयी है।

(२२) विसर्गलीलाके वर्णनमें कामपुरुषार्थरूप प्रकरणके अन्तर्गत स्वकामरूप अवान्तर प्रकरणके दसवें, अर्थात् स्कन्धादिसे बाईसवें, अध्यायमें पृथु और सनत्कुमार के संवाद और महाराजा पृथुपर दिव्य प्रसाद और ज्ञान की कथा वर्णित हुयी है।

(२३) विसर्गलीलाके वर्णनमें कामपुरुषार्थरूप प्रकरणके अन्तर्गत स्वकामरूप अवान्तर प्रकरणके ग्यारहवें, अर्थात् स्कन्धादिसे तेईसवें, अध्यायमें महाराजा पृथुके वानप्रस्थाश्रममें प्रवेश करनेको राजभारके त्याग तथा वनमें उग्र तपस्याद्वारा अन्तमें ब्रह्मभावके लाभ की कथा कही गयी है।

इस तरह ग्यारह अध्यायोंद्वारा कामपुरुषार्थके सिद्धिकी कथाके बाद अब मोक्षरूप पुरुषार्थके सिद्धिकी कथा शेष आठ अध्यायोंमें की जानी है।

(विसर्गलीलाके वर्णनार्थ चतुर्थस्कन्धके अन्तर्गत आठ अध्यायोंवाला चौथा मोक्षरूप पुरुषार्थका प्रकरण)

मोक्षके, यहां विसर्गलीलाके अन्तर्गत, प्रमुखतया दो स्वरूप वर्णनीय हैं : १ ब्रह्मभाव तथा २ सायुज्य, अतः प्रकरण भी दो ही हैं। सायुज्य उभयथा शक्य है मुख्य ब्रह्मभावापत्तिके रूपमें अथवा ब्रह्मभावापत्तिकी गौणतामें भी सायुज्य सम्भव है। इन दो तरहके मोक्षके प्रकारोंमें से प्रथम प्रकारका ब्रह्मभावात्मक सायुज्य मोक्ष वैराग्य सांख्य योग तप तथा भक्ति रूपा पंचपर्व विद्याके कारण सिद्ध होता है। अतः इस ब्रह्मभावात्मक सायुज्यमोक्षके प्रकरणमें पांच अध्यायोंको समायोजित किया गया है। ऐसे उभयविध मोक्षकी सिद्धि प्राचीनबर्हिषदों और प्रचेतसों को हुयी थी।

(२४) विसर्गलीलाके अन्तर्गत मोक्षप्रकरणके अवान्तर ब्रह्मभावात्मक सायुज्यके साधनके निरूपक प्रकरणवाले प्रथम, अर्थात् आदितः चौबीसवें, अध्यायमें रुद्रगीत स्तोत्रात्मक सायुज्यमुक्तिके साधनका निरूपण किया गया है।

इस तरह साधनके निरूपणके बाद अब साध्य ब्रह्मभावात्मक सायुज्यके निरूपणार्थ पांच अध्यायोंका समायोजित किया गया है।

(२५) विसर्गलीलाके अन्तर्गत मोक्षप्रकरणके अन्तर्गत ब्रह्मभावात्मक सायुज्य अवान्तर प्रकरणवाले द्वितीय, अर्थात् आदितः पच्चीसवें, अध्यायमें जाग्रदवस्थाद्वारा सर्ववस्तुओंके विवेकका निरूपण जीवकी संसारमार्गमें गतिकी सामग्रियोंके वर्णनतया अभिप्रेत है।

(२६) विसर्गलीलाके अन्तर्गत मोक्षप्रकरणके ब्रह्मभावात्मक सायुज्यके अवान्तर प्रकरणवाले तृतीय, अर्थात् आदितः छब्बीसवें, अध्यायमें स्वप्नावस्थामें सर्ववस्तुओंके विवेकके प्रतिपादनद्वारा संसारमार्गमें गमनकी सामग्रियोंका वर्णन किया गया है।

(२७) विसर्गलीलाके अन्तर्गत मोक्षप्रकरणके ब्रह्मभावात्मक सायुज्यके अवान्तर प्रकरणमें चतुर्थ, अर्थात् आदितः सत्ताईसवें, अध्यायमें सभी नश्वर वस्तुओंके विवेकके प्रतिपादन द्वारा संसारमार्गमें गमनकी सामग्रियोंका वर्णन किया गया है।

(२८) विसर्गलीलाके अन्तर्गत मोक्षप्रकरणके ब्रह्मभावात्मक सायुज्य अवान्तर प्रकरणवाले पांचवें, अर्थात् आदितः अट्ठाईसवें, अध्यायमें सर्ववस्तुओंके सार्थक विनाशके प्रतिपादनद्वारा मुक्तिमार्गमें गमनकी सामग्रियोंका वर्णन किया

गया है.

इस तरह मुख्य ब्रह्मभावात्मक सायुज्यके निरूपणके बाद अब भगवान् श्रीकृष्णके स्वरूपके साथ सायुज्यरूप प्रमुख मोक्षका प्रकार तीन अध्यायोंमें निरूपित किया गया है. भगवत्सायुज्यरूप मोक्ष, क्योंकि, साधन प्रसाद और फल यों तीन तरहसे प्रचेतसोंको सिद्ध हुवा, इसलिये सायुज्यके प्रकरणमें तीन अध्याय समायोजित हुवे हैं.

(२९) विसर्गलीलाके अन्तर्गत मोक्षप्रकरणके ब्रह्मभावात्मक सायुज्यके अवान्तर प्रकरणके उपसंहारपूर्वक अवशिष्ट परममोक्षके उपक्रमतया छुट्टे, अर्थात् आदितः उन्तीसवें, अध्यायमें सभी सन्देशोंको दूर करनेके बाद फलका निरूपण किया गया है.

(३०) विसर्गलीलाके अन्तर्गत परम मोक्षरूप प्रकरणके अवान्तर ^ख भगवत्सायुज्य प्रकरणवाले प्रथम, अर्थात् आदितः तीसवें, अध्यायमें प्रचेतसोंको प्राप्त हुवे भगवत्प्रसादका वर्णन किया गया है.

(३१) विसर्गलीलाके अन्तर्गत परममोक्षप्रकरणके अवान्तर ^ख भगवत्सायुज्य प्रकरणवाले द्वितीय, अर्थात् आदितः इक्तीसवें, अध्यायमें परमफलका वर्णन किया गया है.

यों पांच ब्रह्मभावके और तीन सायुज्यके बराबर आठ अध्यायोंमें मोक्षप्रकरण वर्णित हुवा है. इस तरह विसर्गलीलाका निरूपण इक्तीस अध्यायोंद्वारा पूर्ण किया गया है.

००००००+००००००

(पंचमस्कन्धार्थ स्थानलीला)

स्थूलजगत्को स्थूलवपु हरिका पहचाना
स्कन्ध द्वितीयमें, ध्यान वही अब है अपनाना ।
ध्यान करने असमर्थ स्वतः हम जीव सदा हैं
बुद्धिप्रेरक-कृष्णकृपावश कर सकते हैं ॥

इसके बाद पंचमस्कन्धमें भगवान्की स्थानरूपा लीलाका निरूपण किया गया है. स्वयं श्रीभागवतपुराणमें स्थानलीलाको “स्थिति या स्थान रूपी लीला वैकुण्ठपर विजय है” इन शब्दोंमें परिभाषित किया गया है. ‘विजय’ पदका अर्थ होता है, किसीको अपने आधीन बनाना. अतः सर्गलीलाके अन्तर्गत प्रकट किये पदार्थोंको, जिन्हें विसर्गलीलाके अन्तर्गत यथोचित रूपमें समायोजित भी किया गया, उन पदार्थोंको उनकी मर्यादाके अनुरूप स्थापित करना स्थानलीलामें प्रतिपादनीय माना गया है. प्राकृत पदार्थ, क्योंकि, चौबीस प्रकारके होते हैं, अतः प्राकृत पदार्थोंपर विजय भी १ से २४ यों चौबीस अध्यायोंमें प्रतिपादित हुयी है.

प्राकृत पदार्थोंके बीच अर्थात् सृष्टि रूपी स्थानमें स्वरूपतः प्रकृतिसे अतीत ईश्वर जीव यों दो रूपोंमें भगवान् लीलया अवस्थान करते हैं. तदर्थ अन्तिम दो २५-२६वें अध्याय भी योजित हुवे है.

इस तरह कुल मिला कर यों छब्बीस अध्यायोंवाला यह पंचमस्कन्ध है.

रहनेकी क्रियाको जैसे 'स्थान' कहा जाता है, वैसे ही जिस साधनके अवलंबनद्वारा अथवा जहां रहा जाता हो, उस साधन या देश को भी 'स्थान' कहा जाता है. एतदर्थ देश-काल-स्वरूपके त्रिविध प्रभेदोंका ज्ञान आवश्यक होता है. तदन्तर्गत स्थान भूः भुवः और स्वः यों तीन तरहके देशात्मक होते हैं. वेदमें “बारह महिने पांच ऋतु तीन लोक और आदित्य” यों कालको कुल मिला कर इक्कीस प्रकारका माना गया है. इसी तरह पूर्वोक्त ईश्वर-जीवके प्रभेदवश स्वरूप दो प्रकारके होते हैं. यों इस स्कन्धमें छब्बीस अध्यायोंके योजनमें छब्बीस संख्याका प्रयोजन समझा सकता है. इन सभी स्थानोंमें सर्वत्र-सर्वदा भगवान्के अलावा तो अन्य कोई रह नहीं सकता. अतः सभीके उपादान होने तथा नियामक होने से भगवान् सर्वत्र-सर्वदा-सर्वरूपेण स्थित हो पाते हैं इसे स्थानलीला समझी जाती है.

(प्रकरणार्थ)

यहां प्रकरणोंका विभाजन इस तरह किया गया है कि स्थूलदृष्ट्या स्थानलीलाका विचार करनेपर अध्याय १ से अध्याय १५ तक स्वरूपस्थिति निरूपित हुयी है. इसी तरह अध्याय १६ से अध्याय २६ पर्यन्त देशस्थिति प्रतिपादनीय है. अतः प्रमुख प्रकरण दो ही बनते हैं. यहां कालमें स्थितिका निरूपण नहीं किया गया है. क्योंकि जिस कालमें सब कुछ अवस्थित वह काल स्वयं तो भगवान्में ही उनकी चेष्टाके रूपमें स्थित रहता है.

अतः स्वरूपद्वारा स्थिति और देशमें स्थिति, यों स्थानलीलाके दो प्रमुख प्रकरण बनते हैं. इनमें स्वरूपस्थिति पुनः षड्विध भगवद्गुणोंकी स्थितिके रूपमें और अष्टांगयोग तथा ज्ञान की सिद्धिके रूपमें अभिप्रेत है. अतः इसके दो अवान्तर प्रभेद दिखलाये गये हैं.

(अध्यायार्थ)

अपने गुणोंद्वारा भगवान्की स्वरूपस्थितिके निरूपणार्थ, क्योंकि भगवान् ऐश्वर्य वीर्य यश श्री ज्ञान वैराग्य रूपी छह गुणोंसे युक्त हैं अतः, छह अध्याय इस अवान्तर प्रकरणमें समायोजित हैं.

(स्थानलीलान्तर्गत स्वरूपस्थितिके मुख्य प्रकरणके अन्तर्गत भगवान्की अपने छह गुणोंसे स्वरूपस्थितिके निरूपणार्थ १-६ अध्यायोंवाला अवान्तरप्रकरण)

(१) छह भगवद्गुणोंमें से ऐश्वर्य तथा वीर्य रूपी दो गुणोंद्वारा श्रीकृष्णकी स्वरूपेण स्थितिका निरूपण तो तो प्रथम प्रकरणमें ही प्रियव्रत राजाके स्वरूपमें भगवान्के स्थापक ऐश्वर्य तथा वीर्य के वर्णनद्वारा प्रथम अध्यायमें किया गया है.

(२) अपने श्री रूपी गुणद्वारा श्रीकृष्णकी स्वरूपेण स्थितिके प्रकरणमें आग्नीध्रके स्वरूपमें अपनी स्थापिका श्रीका निरूपण द्वितीय अध्यायमें किया गया है.

(३) अपने यशोरूपी गुणद्वारा श्रीकृष्णकी स्वरूपेण स्थितिके प्रकरणमें नाभि राजाके स्वरूपमें अपने स्थापक यशका निरूपण तृतीय अध्यायमें किया गया है.

(४) अपने धर्मी रूपमें श्रीकृष्णकी स्वरूपेण स्थितिके प्रकरणमें प्रजाके स्वरूपमें अपने स्थापक धर्मिरूप ऋषभावतारका निरूपण चतुर्थ अध्यायमें किया गया है.

(५) अपने ज्ञान रूपी गुणद्वारा श्रीकृष्णकी स्वरूपेण स्थितिके प्रकरणमें ऋषभपुत्रोंके स्वरूपमें अपने स्थापक ज्ञानका निरूपण पांचवें अध्यायमें किया गया है.

(६) अपने वैराग्य रूपी गुणद्वारा श्रीकृष्णकी स्वरूपेण स्थितिके प्रकरणमें योगिप्रभृति सभी लोगोंके स्वरूपमें अपने स्थापक वैराग्यका निरूपण छठे अध्यायमें किया गया है.

इसके बाद दूसरे प्रकारकी स्वरूपस्थितिके निरूपणार्थ दूसरा अवान्तर प्रकरण आता है.

(स्थानलीलान्तर्गत स्वरूपस्थितिके मुख्य प्रकरणके अन्तर्गत भगवान्की अष्टांगयोग तथा ज्ञान द्वारा स्वरूपस्थितिके निरूपणार्थ ७-१५ अध्यायोंवाला अवान्तरप्रकरण)

योग अष्टांगोंवाली साधना है. अतः तदनुरूप योगद्वारा स्वरूपस्थितिके निरूपणार्थ द्वितीय प्रकरणमें आठ अध्यायोंको तथा मध्यमें एक ज्ञानके द्वारा स्वरूपस्थितिके वर्णनार्थ यों कुल नौ अध्यायोंवाला यह अवान्तरप्रकरण है.

(७) श्रीकृष्णकी योगद्वारा स्वरूपस्थितिके अवान्तरप्रकरणमें भरतके स्वरूपमें प्रजापालनादि धर्म, योगसाधना और भक्ति का निरूपण सातवें अध्यायमें किया गया है.

(८) श्रीकृष्णकी योगद्वारा स्वरूपस्थितिके अवान्तरप्रकरणमें प्रारब्धादिके वश योगसाधनाके विघात हो जानेपर भी भरत, जो सर्वसाधनोंसे सम्पन्न मुमुक्षु थे, उनका मनकी चंचलताके प्रवाहमें बह जानेपर भी हरिभक्तिद्वारा उन्हें ज्ञानप्राप्त होनेका निरूपण आठवें अध्यायमें किया गया है.

(९) श्रीकृष्णकी योगद्वारा स्वरूपस्थितिके अवान्तरप्रकरणमें मनकी स्थिरता भगवत्प्राप्तिके योग्य ब्राह्मणदेह मिलनेपर भी प्रतिबन्धक अध्यापन वृषलके हाथोंसे मृत्यु आदिसे हरिभक्ति ही मुक्ति प्रदान करती है, इसका निरूपण नौवें अध्यायमें किया गया है.

(१०) श्रीकृष्णकी योगद्वारा स्वरूपस्थितिके अवान्तरप्रकरणमें मर्यादामें कर्म आदिकी बलिष्ठता दिखलानेको भरतको ज्ञानी होनेपर भी जन्मान्तर लेना पड़ा और यह जतानेको ज्ञानी होनेके कारण रहूणको ज्ञानोपदेशके निरूपणके प्रसंगमें गुरुके प्रति प्रणति और प्रश्न का निरूपण दसवें अध्यायमें किया गया है.

(११) श्रीकृष्णकी योगद्वारा स्वरूपस्थितिके अवान्तरप्रकरणमें पूर्वजन्मसिद्ध ज्ञानके बोधक उपदेशका निरूपण तथा योगानुसारी विज्ञान तथा मनोनिग्रह का निरूपण ग्यारहवें अध्यायमें किया गया है.

(१२) श्रीकृष्णकी योगद्वारा स्वरूपस्थितिके अवान्तरप्रकरणमें पूर्वजन्मसिद्ध ज्ञानके बोधक उपदेशके प्रसंगमें भगवान्से अतिरिक्त पदार्थोंको अवस्तु दिखला कर उत्कृष्ट वैराग्यका निरूपण बारहवें अध्यायमें किया गया है.

(१३) श्रीकृष्णकी योगद्वारा स्वरूपस्थितिके अवान्तरप्रकरणमें पूर्वजन्मसिद्ध ज्ञानके उपदेश देनेके प्रसंगमें अधिकारके परीक्षक होनेके निरूपणमें भगवान्से अतिरिक्त सारे पदार्थ अन्तमें दुःखप्रद ही होते हैं ऐसे निरूपण किया गया. अतः ऐसे उत्कृष्टतर वैराग्यका निरूपण तेरहवें अध्यायमें किया गया है.

(१४) श्रीकृष्णकी ज्ञानद्वारा स्वरूपस्थितिके निरूपणार्थ इस अध्यायमें ज्ञानमार्गीय पुरज्जनोपाख्यानके रूपकवाली परोक्षकथा राजा परिक्षित भलीभांति समझ नहीं पाये, एतावता उनका भक्तिमार्गीय उत्कर्ष दिखलाते हुवे भरतके दो पूर्वजन्मोंकी सार्थकताका निरूपण इस चौदहवें अध्यायमें किया गया है.

(१५) पुनः श्रीकृष्णकी योगद्वारा स्वरूपस्थितिके निरूपणार्थ भरतके वंशकी उत्तमताका निरूपण इस पंद्रहवें अध्यायमें किया गया है.

इस तरह तीन तरहकी स्वरूपस्थितिके निरूपणमें कुल मिला कर पंद्रह अध्यायोंका संनिवेश हुवा है. इसके बाद दूसरा मुख्य प्रकरण देशस्थितिका प्रारम्भ होता है.

**(स्थानलीलान्तर्गत द्वितीय मुख्य प्रकरण देशस्थितिका है अतः तदन्तर्गत तीन अवान्तर प्रकरणोंमें प्रथम
अवान्तरप्रकरण १६-२० अध्यायोंका)**

जैसा कि कहा जा चुका तदनुसार भूः भुवः स्वः यों देशके तीन तरहके प्रभेद होते हैं. अतः तदनुसार भूलोक प्रधानतया पंचमहाभूतोंसे घटित होता है. अतः इस अवान्तरप्रकरणमें पांच ही अध्याय तदनुरूप समायोजित हुवे हैं.

(१६) श्रीकृष्णकी देशस्थितिके मुख्यप्रकरणके अन्तर्गत भूमि रूपी अवान्तर मध्य स्थानके वर्णनके अन्तर्गत भूमिके परिमाण तथा स्वरूप सोलहवें अध्यायमें निरूपित हुवे हैं.

(१७) श्रीकृष्णकी देशस्थितिके मुख्यप्रकरणके अन्तर्गत भूमि रूपी अवान्तर मध्य स्थानके वर्णनके अन्तर्गत भूमिके नवखण्डोंमें से एकखण्डमें गंगाजलके सम्बन्धके कारण भूमिमें आगन्तुक धर्मकृत उत्कर्षका निरूपण हुवा है.

भगवान् श्रीहरिकी पूजाके कारण इलावृत खण्डके उत्कर्षका वर्णन सत्रहवें अध्यायमें किया गया है.

(१८) श्रीकृष्णकी देशस्थितिके मुख्यप्रकरणके अन्तर्गत भूमि रूपी अवान्तर मध्य स्थानके वर्णनके अन्तर्गत भद्राश्व आदि छह खण्डोंके उत्कर्षका वर्णन अट्ठारहवें अध्यायमें किया गया है.

(१९) श्रीकृष्णकी देशस्थितिके मुख्यप्रकरणके अन्तर्गत भूमि रूपी अवान्तर मध्य स्थानके वर्णनके अन्तर्गत गुणमार्गद्वारा हरिपूजनका उत्तरोत्तर उत्कर्ष निरूपण करके दो प्रदेशोंमें अर्थात् पर्वतोंमें से उद्भूत होनेवाली नदियोंके जलके कारण तथा कर्मभूमि होनेके कारण भी सर्वोपजीव्य होनेसे तथा देवताओंकेलिये भी प्रशंसनीय होनेके कारण भारतवर्ष रूपी भूप्रदेशका परम उत्कर्ष उन्नीसवें अध्यायमें वर्णित हुवा है.

(२०) श्रीकृष्णकी देशस्थितिके मुख्यप्रकरणके अन्तर्गत भूमि रूपी अवान्तर मध्य स्थानके वर्णनके अन्तर्गत प्लक्ष आदि द्विषोंके प्रमाण तथा लक्षण का निरूपण बीसवें अध्यायमें किया गया है.

(स्थानलीलान्तर्गत २१-२३ अध्यायोंवाला पांचवा प्रकरण)

भुवर्लोकमें प्रकृतिके तीन सत्त्व-रजस्-तमो गुणोंकी प्रधानता होनेके कारण इस प्रकरणमें तीन अध्याय समायोजित हुवे हैं.

(२१) श्रीकृष्णकी देशस्थितिके मुख्यप्रकरणके अन्तर्गत अवान्तर-ऊर्ध्वदेशरूप द्युलोकमें स्थितिका तथा द्युमर्यादाका निरूपण करते हुवे सूर्यलोकका वर्णन इक्कीसवें अध्यायमें किया गया है.

(२२) श्रीकृष्णकी देशस्थितिके मुख्यप्रकरणके अन्तर्गत अवान्तर-ऊर्ध्वदेशरूप द्युलोककी मर्यादाका निरूपण बाईसवें अध्यायमें किया गया है.

(२३) श्रीकृष्णकी देशस्थितिके मुख्यप्रकरणके अन्तर्गत अवान्तर-ऊर्ध्वदेशरूप द्युलोककी मर्यादाके निरूपणमें शिशुमार रूपी तारामण्डल संस्थान तेईसवें अध्यायमें वर्णित हुवा है.

(स्थानलीलान्तर्गत २४-२६ अध्यायोंवाला छट्ठा प्रकरण)

स्वर्लोकमें भी प्रकृतिके उक्त तीन गुणोंकी प्रधानता रहती है. अतः यहां भी तीन अध्याय समायोजित हुवे हैं.

(२४) श्रीकृष्णकी देशस्थितिके मुख्यप्रकरणके अन्तर्गत अवान्तर-अधोदेशरूप तथा स्वर्गलोक रूप देशोंकी मर्यादाके निरूपण चौबीसवें अध्यायमें किये गये हैं.

(२५) श्रीकृष्णकी देशस्थितिके मुख्यप्रकरणके अन्तर्गत अन्तर्गत अवान्तर-अधोदेशरूप पाताल आदि देशोंमें भी

सुखके हेतुओंका निरूपण पच्चीसवें अध्यायमें किया गया है.

(२६) श्रीकृष्णकी देशस्थितिके मुख्यप्रकरणके अन्तर्गत निषिद्ध कर्मोंके कर्ताओंको कर्मफलतया अवान्तर-
नरकदेशकी यातना तथा उसकी मर्यादाका निरूपण छब्बीसवें अध्यायमें किया गया है.

इस तरह स्वरूपस्थिति और देशस्थिति दोनों ही तीन-तीन प्रकारकी होती हैं अतः यहां इस स्कन्धमें कुल मिला कर छह प्रकरणोंका संनिवेश है.